करता है। कृष्णभावनाभावित पुरुष भगवत्-इच्छा की पूर्ति में ही नित्य लगा रहता है, क्योंकि उसमें निजेन्द्रियतृप्ति की कामना की गन्ध भी नहीं रहती। वह ठीक यन्त्रस्थ उपकरण के समान कार्य करता है। जिस प्रकार कार्यशीलता के लिए यन्त्र के उपकरण को तेल और सफ़ाई अपेक्षित है, उसी भाँति कृष्णभावनाभावित मनुष्य कर्म के द्वारा अपना पालन करता है, जिससे वह दिव्य भगवत्सेवा करने के लिए स्वस्थ रह सके। इसलिए सब प्रकार के कर्मफल से वह असंग बना रहता है। पशु की भाँति उसका अपने शरीर पर कोई अधिकार नहीं होता। क्रूर स्वामी कभी-कभी पशु को मार भी डालता है परन्तु पशु विरोध नहीं करता, क्योंकि उसमें यथार्थ स्वतन्त्रता का अभाव है। स्वरूप-साक्षात्कार में पूर्णतया तत्पर कृष्णभावनाभावित पुरुष के पास इतना समय नहीं होता कि वह विषयों में स्वामीपन का मिथ्या अभिमान करे; प्राणधारण करने के हेतु धन-उपार्जन की किसी असद्वृत्ति से भी उसे कोई प्रयोजन नहीं हो सकता। अतएव वह इस प्रकार के पापकर्मों से कलुषित नहीं होता। वह सब प्रकार से अपने कर्मों के बन्धन से मुक्त है।

यदृच्छालाभसंतुष्टो द्वन्द्वातीतो विमत्सरः।
समः सिद्धावसिद्धौ च कृत्वापि न निबध्यते।।२२।।

यदृच्छालाभ=अपने आप जो कुछ प्राप्त हो (उसी में); **सन्तुष्टः**=सन्तोष करने वाला; **द्वन्द्व**=द्वन्द्वों से; **अतीतः**=मुक्त· **विमत्सरः**=ईर्ष्यारहित; **समः**=स्थिर-बुद्धि; **सिद्धौ**=सिद्धि में; **असिद्धौ**=असिद्धि में; **च**=भी; **कृत्वा**=कर्म करने पर; **अपि**=भी; **न**=नहीं; **निबध्यते**=बँधता।

अनुवाद

अपने-आप जो कुछ प्राप्त हो जाय, उसी में सन्तुष्ट, द्वन्द्वों और ईर्ष्या दोष से मुक्त तथा सिद्धि और असिद्धि को समान समझने वाला पुरुष कर्म करने पर भी नहीं बँधता।।२२।।

तात्पर्य

कृष्णभावनाभावित पुरुष शरीरधारण के लिए भी विशेष उद्यम नहीं करता, स्वयंप्राप्त लाभ में ही सन्तुष्ट रहता है। वह याचना अथवा ऋण नहीं लेता, वरन् यथासामर्थ्य उद्यम करता है और सद्वृत्ति से जो कुछ भी प्राप्त हो जाय उसी में परितृप्त रहता है। इस प्रकार अपनी जीविका के सम्बन्ध में वह स्वतन्त्र है, इसलिए किसी दूसरे की सेवा को अपने कृष्णभावनाभावित सेवा-कार्य में व्यवधान उपस्थित नहीं करने देता। दूसरी ओर, भगवत्सेवा के लिए संसार के द्वन्द्वों से प्रभावित हुए बिना वह किसी भी कर्म में प्रवृत्त हो सकता है। सांसारिक द्वन्द्वों का अनुभव शीत-ग्रीष्म, सुख-दुःखादि के रूप में होता है। परन्तु कृष्णभावनाभावित पुरुष द्वन्द्वों से मुक्त रहता है; कारण वह श्रीकृष्ण की प्रीति के लिए कुछ भी कर्म करने में संकोच नहीं करता। इसीलिए सिद्धि तथा असिद्धि दोनों में वह समभाव रखता है। पूर्ण ज्ञानी में ये सब लक्षण प्रकट रहते हैं।